**ओ३म्**

**‘पृथिवी पर श्रेष्ठ धर्म वैदिक धर्म और श्रेष्ठ संगठन आर्यसमाज’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

 ईश्वर, जीवात्मा और प्रकृति का अस्तित्व सत्य है। किसी भी विषय में सत्य केवल एक ही होता है। जिस प्रकार दो व दो को जोड़ने से चार होता है, कुछ कम व अधिक नहीं हो सकता इसी प्रकार ईश्वर, जीव, प्रकृति, सृष्टि, धर्म, समाज, मानवीय आचार व विचार आदि सिद्धान्त व मान्यतायें भी भिन्न-भिन्न न होकर सर्वत्र एक समान ही होनी चाहिये। **यदि यह पूछा जाये कि वेद पर आधारित वैदिक धर्म और आर्यसमाज संगठन की प्रमुख विशेषता क्या है तो इसका एक वाक्य में उत्तर है कि यह धर्म व संगठन सत्य पर आधारित है। दूसरा उत्तर यह है कि वैदिक धर्म व आर्य समाज का संगठन प्राणीमात्र के हित व कल्याण के लिए हैं। यह कभी किसी के अकल्याण की बात न सोचता है और न ही करता है। एक अन्य उत्तर यह भी हो सकता है कि यह दोनों ज्ञान पर आधारित है तथा अन्धविश्वास, पाखण्ड, कुरीति, रूढि़, मिथ्या परम्परा आदि से पूर्णतः रहित हैं।** आर्यसमाज की मान्यता है कि वेद मन्त्रों के अर्थ वही स्वीकार्य होंगे जो सत्य हों व मानव सहित प्राणीमात्र के हित के लिए हों। यदि कहीं कोई भ्रान्ति हो तो उसे इस कसौटी पर कस कर संशोधित कर लेना चाहिये। अन्य मतों, सम्प्रदायों वा धर्मों में सत्य, तर्क व युक्ति को वैदिक धर्म की भांति महत्व नहीं दिया जाता। तर्क व युक्ति से सिद्ध बातें ही सत्य हुआ करती हैं। इसी से ज्ञान की उन्नति व अज्ञान की निवृत्ति होती है और यही मनुष्य के सुख व उन्नति का मुख्य कारण व आधार है।

वैदिक धर्म का आरम्भ कब, किसने व क्यों किया? इस प्रश्न पर विचार करना भी समीचीन है। इसका उत्तर है वैदिक धर्म का आरम्भ चार वेदों ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद के ज्ञान से सृष्टि के आरम्भ में हमारे पहली पीढ़ी के ऋषियों ने किया। यह सभी ऋषि ईश्वर, जीवात्मा व प्रकृति का साक्षात व यथार्थ ज्ञान रखने के साथ-साथ वेदों के पूर्ण वेत्ता व विद्वान थे। वेदों में जो मन्त्र व उनमें अलौकिक ज्ञान है वह किसी मनुष्य व ऋषि द्वारा रचित, निर्मित व उत्पन्न नहीं है अपितु यह वेद, इसके मन्त्र व ज्ञान इस सृष्टि के रचयिता व संचालक ईश्वर का निज ज्ञान है जो वह सृष्टि के आरम्भ में अमैथुनी सृष्टि में उत्पन्न आदि मनुष्यों, स्त्री व पुरूषों को, उनके कल्याणार्थ देता है। **चार वेदों का यह ज्ञान सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, सर्वशक्तिमान व सर्वज्ञ ईश्वर ने सृष्टि के आदि में चार ऋषियों अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा की आत्माओं में प्रेरणा द्वारा स्थापित किया था।** ईश्वर ने ही जीवात्मा को मनुष्य शरीर दिये, इन शरीरों में व्यवहार के लिए पांच ज्ञानेन्द्रियां, पांच कर्मेन्द्रियां व बुद्धि आदि प्रदान करने सहित सृष्टि के आरम्भ में वेदमन्त्रों का उच्चारण, परस्पर संवाद एवं व्यवहार करना भी सिखाया है। तर्क व विवेचन से यह सिद्ध है कि यदि ईश्वर इस सृष्टि के आदि मनुष्यों को वेदों का ज्ञान न देता, जिससे कि वह परस्पर संवाद आदि कर सके और सत्य व असत्य में भेद कर सकें, तो उनका जीवन व्यतीत करना संभव नहीं था। मान लीजिए हमें बोलना नहीं आता और हमारे आसपास के अन्य मनुष्यों को भी नहीं आता। हममें ज्ञान भी नहीं है। ऐसी स्थिति में हम क्या कोई व्यवहार कर सकते हैं? इसका उत्तर है कि हम परस्पर किसी प्रकार का कोई व्यवहार नहीं कर सकते। व्यवहार के लिए किसी न किसी भाषा सहित उठने, बैठने, चलने, फिरने, सोचने, समझने, खाद्य-अखाद्य पदार्थों का ज्ञान, भोजन की विधि, मल-मूत्र विसर्जन आदि सभी आवश्यक क्रियाओं का ज्ञान आवश्यक है। अतः सृष्टि की रचना के बाद अमैथुनी सृष्टि में मनुष्यों की उत्पत्ति के साथ ही उनको ईश्वर से ज्ञान मिलना तर्क संगत है। यही ज्ञान उसे परमात्मा से मिलता है और इसी का नाम वेद है।

परमात्मा प्रदत्त इसी ज्ञान से प्रथम चार ऋषियों से अध्ययन, अध्यापन, शिक्षा, प्रचार, प्रवचन व उपदेश की परम्परा आरम्भ हुई और सभी लोग ज्ञान सम्पन्न हुए। यह वेद ज्ञान आज भी अपने मूल स्वरूप में सुरक्षित है। महाभारत के बाद यह ज्ञान लुप्त हो गया था जिसके कारण देश व विश्व में अज्ञान का घोर अन्धकार फैला और अज्ञान पर आधारित अनेक मत व मतान्तर उत्पन्न हुए। महर्षि दयानन्द, जो कि वेदों के उच्च कोटि के मर्मज्ञ विद्वान थे, उन्होंने चारों वेदों की परीक्षा कर घोषणा की कि वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक हैं। वेद का पढ़ना व पढ़ाना तथा सुनना व सुनाना सभी मनुष्यों वा आर्यों का परम धर्म है। अपनी इस घोषणा को उन्होंने सत्यार्थप्रकाश और ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका आदि अनेक ग्रन्थों को लिखकर पुष्ट किया। उन्होंने वेदों के सभी मन्त्रों का भाष्य करना आरम्भ किया था। ऋग्वेद आंशिक व यजुर्वेद का सम्पूर्ण भाष्य उन्होंने किया है। आकस्मिक मृत्यु के कारण वह वेदों के भाष्य को पूर्ण नहीं कर सके। उन्होंने जितने ग्रन्थ लिखे और उनकी जो शिक्षायें, उपदेश, पत्र, पुस्तकें, शास्त्रार्थों के विवरण आदि उपलब्ध हैं, उनसे वैदिक धर्म का विस्तृत सत्य स्वरूप प्रकट होता है। इस पर विचार करने पर यह पूर्व व पश्चात प्रचलित सभी धर्मों में श्रेष्ठ सिद्ध होता है। अपने ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में उन्होंने प्रमुख सभी मतों का तुलनात्मक अध्ययन भी प्रस्तुत किया है जो वेद को विश्व के सभी मनुष्यों के धर्म की उनकी मान्यता को पुष्ट करता है।

वेद धर्म की पहली विशेषता तो यह है कि वेद की सभी मान्यताओं तर्क व युक्ति की कसौटी पर सत्य सिद्ध होती हैं। वेद, तर्क व युक्तियों से डरता नहीं अपितु उनका स्वागत करता है। वेदों की सभी मान्यतायें ज्ञान व विज्ञान की कसौटी पर भी सत्य सिद्ध हैं। ईश्वर, जीव व प्रकृति का जो स्वरूप वेदों में उपलब्घ होता है वह अपूर्व व आज भी सर्वोत्तम हैं एवं विवेक पर आधारित है। अन्य मतों में यह बात नहीं है। वेदाधारित ईश्वरोपासना वा पंचमहायज्ञ विधि में भी मुनष्यों के सर्वोत्तम कर्तव्यों का विधान किया गया है जिससे मनुष्य की व्यक्तिगत व सामाजिक उन्नति होने के साथ सभी प्राणियों का कल्याण होता है। कर्म-फल सिद्धान्त भी वेद प्रदत्त ज्ञान के अन्र्तगत ही सत्य सिद्धान्त है जिसके अनुसार मनुष्य जो शुभ व अशुभ कर्म करता है उसका फल उसे जन्म व जन्मान्तरों में अवश्य ही भोगना होता है। अशुभ कर्मों का त्याग व शुभ कर्मों को करके तथा साथ हि वेदविहित ईश्वरोपासना, यज्ञादि कार्य, मातृ-पितृ-आचार्यों की सेवा, परोपकार व विद्यायुक्त कर्मों को करने से ही मनुष्य धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष को प्राप्त होता है। यह वैदिक धर्म की विशेषता व युक्तिसंगत सिद्धान्त है।

आर्यसमाज वेदों के सत्य ज्ञान को संसार में फैलाने के लिए स्थापित किया गया एक संगठन है जिसकी स्थापना महर्षि दयानन्द सरस्वती ने 10 अप्रैल सन् 1875 को मुम्बई में की थी। इस संगठन की स्थापना का मुख्य उद्देश्य महर्षि दयानन्द के समय में वैदिक धर्म का संगठित रूप से प्रचार करना था और उनके बाद भी **‘कृण्वन्तो विश्वमार्यम्’** (संसार को श्रेष्ठ बनाओ) के लक्ष्य की प्राप्ति तक संसार में वेदों का प्रचार अबाधित रूप से हो, यह मुख्य प्रयोजन था। महर्षि दयानन्द ने पृथिवी के सभी मनुष्यों के कल्याणार्थ वेदों की सार्वभौमिक व सार्वजनीन मान्यताओं व सिद्धान्तों के प्रचार के लिए अनेक ग्रन्थों की रचना की जिनमें सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कारविधि, आर्याभिविनय, ऋग्वेद आंशिक व यजुर्वेद सम्पूर्ण वेदभाष्य आदि ग्रन्थ हैं। इन ग्रन्थों के अनेक भाषाओं में अनुवाद भी उपलब्ध हैं। ग्रन्थ लेखन के इस स्थाई कार्य के अतिरिक्त महर्षि दयानन्द ने देश के प्रमुख स्थानों पर जाकर वैदिक विचारधारा का प्रचार किया और सभी मतों को अपनी-अपनी धर्म व समाज विषयक मान्यताओं पर शंकाओं का निवारण करने का अवसर दिया। प्रतिपक्षी मतों के आचार्यों को उन्होंने शंका समाधान का अवसर देने के साथ शास्त्रार्थ करने की चुनौती भी दी और अनेक प्रमुख मतों के विद्वानों से शास्त्रार्थ कर वैदिक मत की श्रेष्ठता, ज्येष्ठता, ज्ञानसम्पन्नता व सत्यता को प्रतिपादित व सम्पादित किया। इसके साथ ही महर्षि दयानन्द ने उदयपुर, शाहपुर, जोधपुर आदि अनेक देशी रियासतों के शासकों को भी अपना शिष्य व अनुगामी बनाया और वहां वैदिक मत की स्थापना में आंशिक सफलतायें प्राप्त कीं। अनेक पादरी व मुस्लिम विद्वान भी उनकी मित्र मण्डली में थे जो उनकी सभी मतों के अनुयायियों के प्रति सदाशयता के उदाहरण हैं। स्वामी दयानन्द जी ने अनेक अवसरों पर हिन्दी के प्रचार व प्रसार सहित गोरक्षा आदि आन्दोलनों का सूत्रपात भी किया जबकि ऐसे कार्य व उदाहरण पूर्व इतिहास में कहीं उपलब्ध नहीं होते। इस प्रकार से प्रचार करते हुए उन्होंने वेदों के ज्ञान को फैलाकर विश्व के मनुष्यों को प्राणी मात्र के लिए कल्याणकारी वैदिक धर्म की स्थापना व विश्व समुदाय में इसकी स्वीकृति में यथाशक्ति योगदान किया।

ईश्वर इस सृष्टि के सभी मनुष्यों व पूर्वजों का आदि गुरू है। इस सृष्टि में अब तक उत्पन्न हुए सभी आचार्य, विद्वान व ऋषि-मुनि ईश्वर के शिष्य सिद्ध होते हैं जिन्होंने अपने-अपने काल में ईश्वर द्वारा आदि ऋषियों को प्रदत्त वेद ज्ञान को ही जाना, समझा व प्रचारित किया। जिस प्रकार सृष्टि की आदि में ईश्वर अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा को चार वेदों का उपदेश देने से उनका गुरू व चारों ऋषि ईश्वर के शिष्य सिद्ध होते हैं, उसी प्रकार से चार ऋषियों से आरम्भ आचार्य-शिष्य परम्परा के अनुसार उनके बाद के सभी आचार्य उसी ईश्वरीय ज्ञान के प्रचारक व प्रसारक सिद्ध होते हैं। सच्चा आचार्य माता-पिता के समान होता है। इस प्रकार से संसार में जितने भी सच्चे उपदेशक, ज्ञानी व ऋषि आदि हुए हैं वह-वह ज्ञानदाता व ज्ञानप्रसारक होने से अपने शिष्यों के मातृ-पितृ तुल्य ही रहे हैं। उसी परम्परा व ज्ञान प्रवाह का परिणाम ही आज का अन्यान्य विषयक ज्ञान-विज्ञान है। यदि उन्होंने वैदिक ज्ञान को सुरक्षित रखते हुए उपदेश आदि से उसका देश-देशान्तर में प्रचार न किया होता तो आज का मानव ज्ञान-विज्ञान सम्पन्न न हो पाता। संसार के सभी मनुष्यों का कर्तव्य है कि वह ज्ञान विज्ञान का क्षेत्र हो या मत-मतान्तरों का, उनकी सभी मान्यताओं वा सिद्धान्तों की परीक्षा कर उनमें विद्यमान सत्य को ही अपनायें और मिथ्या का त्याग करें। मत-मतान्तरों में निहित अज्ञान व भ्रम की बातें कि जिससे मनुष्यों में समरसता में बाधा पहुंचती है, उनका त्याग करें। **सत्य का ग्रहण व असत्य का त्याग ही वैदिक धर्म व आर्यसमाज का मुख्य प्रयोजन है।** आर्यसमाज सत्य का पोषक व प्रचारक है और विश्व के सभी मनुष्यों में वेदों के सत्य ज्ञान का प्रचार कर उनका कल्याण करना चाहता है। वैदिक ज्ञान ही एकमात्र मनुष्य के अभ्युदय व निःश्रेयस क कारण है, यह निर्विवाद सत्य है। आर्यसमाज के संगठन में कुछ दुर्बलतायें हो सकती हैं परन्तु विश्व के कल्याण की दृष्टि से आर्यसमाज की अवधारणा व उसका प्रभावशाली सशक्त रूप ही मानवता के हित में है। वेद और आर्यसमाज विश्व में मानवता को विद्यमान रखने की गारण्टी है। इसके साथ विश्व के सभी मनुष्यों को अभ्युदय व निःश्रेयस के मार्ग पर अग्रसर करने का एकमात्र संगठन हैं। इसके महत्व को जानकर सभी मनुष्यों को इसे सहयोग देना चाहिये और अपनी सर्वांगीण उन्नति करनी चाहिये।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**